https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 05, PP 67-70(Total PP 04)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

Art: The Supreme Power for Public Well-being

Dr. Avinash Gyanadeorao Kate [a]*

[a] *Dean of Art & Design at Jain (Deemed-to-be-University), Shantamani Art Center, Bengaluru, Karnataka*
[a]*Email: avinash.kate@jainuniversity.ac.in*

Abstract

This research paper explores the impact of art and its significance in society. It argues that art, like education, possesses a profound ability to shape human emotions, thoughts, and interests. Historical evidence highlights art's role in uplifting or dismantling nations and cultures. The author views art as a vital force in creative endeavors, imbued with elements such as entertainment, beauty, and joy.

However, the paper expresses concern regarding the perceived degradation of modern art, evident in the rise of literature and imagery that promote obscenity and vulgarity. The author considers art and literature to be the intellectual nourishment of humanity, and warns that negative influences in this nourishment can lead to social and cultural decline.

The paper particularly draws attention to the field of painting, where most contemporary works feature obscene or sexually suggestive depictions, diminishing the dignity and purity of women. The author proposes that art should focus on portraying women as mothers, sisters, and daughters, and confine erotic imagery to the private sphere.

To elevate art, the paper suggests several solutions. It urges artists to prioritize respect over financial gain and to create high-quality art. It advocates for the establishment of art centers that can leverage music, dance, painting, and acting for the moral and cultural upliftment of society. The author also emphasizes the need for a large association of artists capable of generating public awareness through art. Finally, the paper expresses hope that efforts to present a refined and elegant form of art will lead to transformative changes in society.

यह शोध पत्र कला के प्रभाव और समाज पर उसके महत्व की पड़ताल करता है। यह तर्क देता है कि कला, शिक्षा की तरह, मानवीय भावनाओं, विचारों और रुचियों को आकार देने की गहरी क्षमता रखती है। ऐतिहासिक साक्ष्य इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि कला राष्ट्रों और संस्कृतियों को ऊपर उठाने या गिराने में सहायक रही है। लेखक कला को रचनात्मक प्रयासों में एक महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में देखता है, जो मनोरंजन, सौंदर्य और आनंद जैसे तत्वों से ओतप्रोत है।

हालांकि, यह पत्र आधुनिक कला के कथित क्षरण पर चिंता व्यक्त करता है, जो कामुकता और अश्लीलता को बढ़ावा देने वाले साहित्य और कल्पना में वृद्धि से स्पष्ट है। लेखक कला और साहित्य को मानव के बौद्धिक पोषण के रूप में मानता है, और चेतावनी देता है कि इस पोषण के नकारात्मक प्रभाव से सामाजिक और सांस्कृतिक गिरावट आ सकती है।

पत्र चित्रकला के क्षेत्र में विशेष रूप से ध्यान आकर्षित करता है, जहाँ अधिकांश समकालीन कृतियाँ अश्लील या कामुक चित्रण प्रस्तुत करती हैं, जिससे नारी की गरिमा और पवित्रता कम होती है। लेखक का प्रस्ताव है कि कला

को नारी को माँ, बहन और बेटी के रूप में दर्शाने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए, और कामुक कल्पना को निजी दायरे तक सीमित रखना चाहिए।

कला को ऊपर उठाने के लिए, पत्र कई समाधान सुझाता है। यह कलाकारों से वित्तीय लाभ के बजाय सम्मान को प्राथमिकता देने और उच्च गुणवत्ता वाली कला बनाने का आग्रह करता है। यह ऐसे कला केंद्रों की स्थापना की वकालत करता है जो समाज के नैतिक और सांस्कृतिक उत्थान के लिए संगीत, नृत्य, चित्रकला और अभिनय का लाभ उठा सकें। लेखक कला के माध्यम से जन जागरूकता पैदा करने में सक्षम एक बड़े कलाकार संघ के निर्माण पर भी जोर देता है। अंत में, पत्र आशा व्यक्त करता है कि कला के एक परिष्कृत और सुरुचिपूर्ण रूप को प्रस्तुत करने के प्रयासों से समाज में परिवर्तनकारी परिवर्तन होंगे।

Keywords: Art, Public Well-being, Moral Degradation, Creativity, Awareness.

Received: 8/4/2025
Published: 8/31/2025
----
* Corresponding author.

शिक्षा और विद्या की भांति कला का प्रभाव मानव मन पर जल्दी पड़ता है। कला में भावनाएँ-सवेदनाएँ उभारने, प्रवृत्तियों को ढालने, चिंतन को मोड़ने, एवं अभिरुचि को दिशा देने की अद्भुत क्षमता भरी पड़ी है। कला संगीत, गायन, अभिनय, चित्र, शिल्प, साहित्य, कविता, चलचित्र, नृत्य आदि माध्यमों से विकसित होती है। इसमें मनोरंजन, सौंदर्य, उल्हास, से लेकर न जाने कितने तत्व भरे पड़े है जो मानव मन को संमोहित कर बदलने - पलटने में अत्यधिक समर्थ सिद्ध होते है। आज तक का इतिहास है की कलाकारों ने राष्ट्रों और संस्कृति को उठाया एवं गिराया है। कला में इतनी ताकत है की वह अमृत भी है और विष भी। वह अपने ज़माने के व्यक्ति और समाज को पतन के गर्त में भी डुबो सकती है और उत्थान के शिखर पर भी पंहुचा सकती है। शिक्षा से भी अधिक सामर्थ्य कला में दिखाई पड़ता है। शिक्षा का प्रभाव कई वर्षों बाद दिखाई देता है पर कला का प्रभाव जादू की तरह तत्काल दीखता है, व्यक्ति को बदलने में लोहा पिघलकर पानी बना देने वाली भट्टी की तरह मनुष्य की मनोवृत्तियों में भारी रूपांतर एवं परिवर्तन प्रस्तुत करती है। शिक्षा के बाद रचनात्मक कार्यों में दूसरा मोर्चा कला का ही है। इस आधुनिक काल में कला की दुर्गति जितनी हुई है उतनी संसार में अभी तक कभी नहीं हुई। साहित्य, कला जिसके आधार पर किसी समय के समाज, संस्कृति तथा मनोभूमि का मुल्यांकन किया जाता था, आज विचित्र परिस्थिति में पड़ा हुआ है। कामुकता भड़काने वाले उपन्यास, चित्र, आदि साहित्य जीवन निर्माण स्कूली शिक्षा से भी ज्यादा छपते, वितरित होते हुए दिखाई देते है। इससे पता चलता है की हमारे कलाकार, कवी, साहित्यिक, प्रकाशक, मुद्रक, निर्माता आदि मिलजुलकर क्या समाज को दे रहा है। कला एवं साहित्य मानव का बौद्धिक अन्न है। उसे पचाकर ही जनमानस का सृजन होता है। जो बोओगे वही उगेगा। फल भी बीज के अनुरूप ही उगेगा। प्रेरक साहित्य, कला जनमानस को हिलाकर रख सकती है। इतिहास में ऐसे कई उदाहरण है की सुधारात्मक एवं सृजनात्मक कलाओं ने युगांतरकारी सामाजिक कायाकल्प प्रस्तुत किये है। अति प्राचीन काल में शस्त्रों से क्रांति होती थी आज साहित्य एवं कला की शक्ति से युग बदलते है। हम इस कला की महाशक्ति को फूहड़ कामुकता भड़काने, भोंडे मनोरंजन में उलझने और बुद्धिभ्रम फैलाने में प्रयुक्त कर रहे है। स्कूली साहित्य को जानकारी मात्र मान ले तो सृजनात्मक और प्रेरक कला या साहित्य केवल ६ प्रतिशत रह जाता है, वह कुछ भी नहीं। मानव को बौद्धिक खुराक इतनी कम हो तो जनमानस में प्रेरणात्मक उमंगें उठने की कैसे आशा हम कर सकते है। चित्र,

चलचित्र, आधुनिक कला, संगीत, वाद्य, नृत्य, अभिनय आदि का एक वर्ग है। कला के ये जादू भरे चारों पाये न जाने कहाँ उड़ाए लिए जा रहे है। पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने वाली, पुस्तकों में छपने वाली और वैयक्तिक तथा सामूहिक रूप से गाई जाने वाले गीतों, साहित्य एवं चित्रों का स्तर और भी दयनीय है। कामुकता -कामुकता, श्रृंगार-श्रृंगार हर दिशा में यही गूंज रहा है। इलेक्ट्रॉनिक मिडिया और नवाचार की नई-नई तकनीक इस युग में नए जादू की तरह आया है, और हर जगह में छाया है। उसके साधनोने कोमल भावना वाले उदीयमान नवयुवकों को अपने सम्मोहन-पाश में कसकर जकड़ा है। यह सस्ता मनोरंजन जनमानस को बहोत अच्छा लगा है और उसका हर जगह स्वागत हुआ है। विज्ञानं का यह जादू जनमानस पर सीधा प्रभाव डाल रहा है, और उसकी गहरी छाप पड़ रही है। कला की चर्चा करनी हो तो अब इस तरह की नई नई तकनिकोंको को प्रमुख स्थान देना होगा। आज के यह कला के सारे माध्यम आदर्शवादिता, उत्कृष्टता, समाजनिर्माण, समश्याओंके हल एवं विश्वशांति की ओर उन्मुख रहा होता तो स्वस्थ मनोरंजन के साथ लोक मंगल की आशाजनक सम्भावनायें प्रस्तुत कर सकता था, पर दुर्भाग्यवश ऐसा नहीं हो रहा है। हजार वर्ष की पराधीन, पिछड़ी और पथभ्रष्ट कौम को स्वस्थ्य मार्गदर्शन देने की अपेक्षा आधुनिक कला उलटी दिशा में ही घसीटने लगी है। आज मनोरंजन के नाम पर अधिकतर कामुकता, अश्लीलता, उग्रता, उच्छृंखलता एवं पशुप्रवृत्ति को भड़काने वाले प्रसंग एवं चित्रण ही ज्यादा मिलेंगे। इन्हे रुचिपूर्वक देखने वाली जनता किधर चल रही है, इसे सहज ही परखा जा सकता है। सर्वसाधारण में विशेषतः नवयुवकों, नवयुवतियों में जो चर्चा न करने योग्य दुष्प्रवृत्तियाँ आंधी - तूफान की तरह पनप रही है और जिसकी प्रतिक्रिया अगले दिनों प्रचुर मात्रा में घटित होने वाली है, अवांच्छनीय घटनाओं के रूप में सामने आ रही है। इसे हमारा एक दुर्भाग्य ही कहना चाहिए। कुछ दिन पहले तुकांत गीत, कवितायें छपती थी, जो गाई बजाई, गुनगुनाई जा सकती थी, पर अब अतुकांत कविताओं का फैशन चल पड़ा है। जिन्हे न लिखने वाला समझता है और न पढ़ने वाला। कला का महत्वपूर्ण क्षेत्र गायन , संगीत, वाद्य, अभिनय के साथ जुड़ा हुआ था और उसके द्वारा स्वस्थ्य मनोरंजन के साथ लोकरुचि को परिष्कृत करने में भारी योगदान मिलता था, पर अब तो लगता है, गंगा उलटी बहेगी, सूरज उल्टा घूमेगा। कला जैसी मानव अंतःकरण की अभिव्यंजना जब इस प्रकार अधःपतित होती चली जाएगी तो मानवीय आदर्शों का प्रवाह भी पतनोन्मुख होने से क्यों रुकेगा। चित्रकला के पक्ष में भी यही दुर्दशा है। औघड़ देवी-देवताओंके अतिरिक्त ९० प्रतिशत चित्र अर्धनग्न, फूहड़, भाव- भंगिना भरे कामुक और अश्लील, रमणी और रूपसी के रूप में नारी को चित्रित करने वाले ही मिलेंगे। कला और सुसज्जा के नाम पर यदि एकमात्र आधार यह कुत्सा ही रह गई हो तो बात दूसरी है, अन्यथा सौंदर्य के अगणित आधार चित्रकला की मार्मिकता विकसित करने के लिए अभी जीवित है। सब ओर से मन हटाकर केवल नारी के शील पर आंच लाने वाले और उसके प्रति कुदृष्टि भड़काने वाले चित्रों के चित्रण, प्रदर्शन, प्रकाशन, मुद्रण और विक्रय की दुरभिसंधि से क्या कुछ बनने वाला है। लोगों के भीतर बैठे हुए असुर की तृप्ति करके इस प्रकाशन से पैसे बटोरने के साथ यह भी सोचना चाहिए की इस कला की दुर्गति का परिणाम हमारी संस्कृति और नैतिकता को कितना महंगा पड़ेगा। सुरुचि और शालीनता का तकाजा है की नारी की गरिमा, पवित्रता और उत्कृष्टता को रखा जाये। उसे माता, भगिनी और बेटी के रूप में ही चित्रित किया जाये। रमणी और कामिनी का भी उसका एक रूप हो सकता है पर उसे दाम्पत्य जीवन की मर्यादाओं तक ही रखना चाहिए। उसका सार्वजानिक प्रदर्शन ठीक नहीं। कला को प्रस्तुत करने के अनेक क्षेत्र खुले है। कला में इस तरह कुत्सा को छोड़कर ९९ प्रतिशत विश्व में फैले पड़े सुरुचिपूर्ण सौंदर्य को चित्रित करके अपने स्तर को ऊँचा रखे। आज कल हर कोई जनमानस की दुर्बलता से लाभ उठाकर अपनी तिजोरिया जल्द से जल्द भरना चाहते है। इसमें लोगो का समाज का अहित होता है तो हो। खरीदने वाले भी यह नहीं देखते है की पैसा और समय खर्च करके राजी - ख़ुशी उस विष को खरीद रहे है, जो उनके नैतिक, पारिवारिक मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य को नष्ट कर देगा। हमें बुरे वस्तु की तुलना में अच्छी वस्तु रखकर लोगो की विवेक बुद्धि को यह अवसर देना चाहिए की वह दो में से एक को चुन सके। जब एक ही प्रवाह है, एक ही हवा है तो उसमे भले बुरे

सभी बहेंगे। बुरे के मुकाबले में अच्छे की प्रतिद्वंदिता का ही मार्ग शेष रह जाता है। देखा जाये तो सरकार की तरफ से शिक्षा तथा कला को लोक-निर्माण की दिशा में प्रवृत्त किया जा सकता है, पर ऐसी आशा करना व्यर्थ है। हमें जनस्तर पर ही कला का भी निखरा रूप जनसाधारण के सामने रखना होगा। जनता के विवेक का स्तर अभी शेष है, हमें उसी को जगाना और प्रयुक्त करना है।

कला केवल कुत्सा के लिए नहीं है उसका सुरुचिपूर्ण परिष्कृत रूप समाज के सामने प्रस्तुत करेंगे। कलाकार अपने नाम को कलंकित करके कुछ रूपये कमाने की अपेक्षा अपना सन्मान यथावत रखते हुए कुछ कम लेकर भी अच्छी कला को ही प्रस्तुत करे। कलाकार चाहे तो कविता, गायन, संगीत, वाद्य, नृत्य, चित्र, अभिनय आदि के क्षेत्र से क्रांतिकारी परिवर्तन कर सकते है। अब समय तेजी से बदल रहा है। कितनी उच्चस्तरीय फिल्मे कुरुचिपूर्ण और बदनाम फिल्मों से भी अधिक सफल सिद्ध हो रही है। इससे आभास मिलता है की कुरुचि के विरुद्ध तीव्र प्रतिक्रिया होने वाली है और आने वाले समय में सुरुचिपूर्ण कला को उचित स्थान और सन्मान मिलने वाला है। आज आवश्यकता ऐसे कला केंद्रों की है, जो संगीत, वाह्य, अभिनय, चित्र, शिल्प, कला के आधुनिक तकनीक को तीर्थराज बनाकर व्यक्ति और समाज के पाप-तापों की धोने के लिए अथक काम कर सके। समुचित प्रशिक्षणप्राप्त व्यक्ति ही इस क्षेत्र में प्रवेश कर आशाजनक परिणाम उत्पन्न कर सके। इसलिए सबसे पहले आवश्यकता उपयुक्त छात्रों को प्रशिक्षित करने की है और यह काम विरले कलाकार और साधन संपन्न विद्यालय कर सकते है। जिन कलाकार के मन में राष्ट्र के प्रति, कला के प्रति कर्तव्य परायणता शेष है, उन्हें अपनी उस प्रतिभा को राष्ट्रमाता के लिए अर्पित करना चाहिए। जिन्हे वाद्य बजाने में, गीत गाने में, चित्रकारी करने में, शिल्प बनाने में, नृत्य करने में, अभिनय में, कला है मिडिया के तंत्र में प्रवीणता है, उन्हें अपनी कुछ क्षमता लोक मंगल के लिए भेट देनी चाहिए। विभिन्न स्तर के प्रदर्शन, आयोजन आदि के लिए मंडलीय गठित की जा सकती है और उन्हें समय समय पर देश-विदेश भर में चलते रहने वाले अच्छे कार्यों के साथ जोड़ा जाये। इस प्रकार कलाकारोंका एक बहुत बड़ा संघ खड़ा हो सकता है, जो कला के माध्यम से जनजागरण का महान प्रयोजन पूरा करने में सक्षम होगा। वह सिर्फ मनोरंजन मात्र न हो, इसे भावनात्मक बनाया जा सके तो ही क्रांतिकारी परिवर्तन समाज में प्रस्तुत किया जा सकता है। नवनिर्माण की दिशा में कला के माध्यम से जो महत्वपूर्ण कदम इन दिनों उठ रहे है उन्हें देखते हुए लगता है सृजन का देवता अब अपना प्रयोजन पूरा करने पर तुल गया है और उसे पूरा करके ही रहेगा। यह कितने हर्ष और संतोष की बात है की जन मानस को गुदगुदाने, उसे भावविभोर करने और उस जागरण को सृजन की ओर मोड़ने का प्रयत्न भावनाशील कलाकारों द्वारा किया जायेगा।

संदर्भ:

1. युग निर्माण योजना -दर्शन, स्वरुप व् कार्यक्रम - लेखक पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य, प्रकाशक युग निर्माण योजना, मथुरा
2. जीवन जीने की कला -१, - लेखक पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य, प्रकाशक युग निर्माण योजना, मथुरा
3. ललित कला अभिव्यक्ति - प्रा जयप्रकाश जगताप, प्रथम आवृत्ति २००६
4. पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्गमय, प्रकाशक-अखंड ज्योति संस्थान, मथुरा, द्वितीय संस्मरण १९९८
5. मुक्तज्ञान कोष विकिपीडिया https://en.wikipedia.org › wiki > Art